Research Journal of Language, Literature and Humanities ______________________________E-ISSN 2348-6252
Vol. **11(1),** 7-13, January **(2024)** *Res. J. Lang. Lit. Humanities*

प्राचीन बौद्ध साहित्य और भखखुनी संघ।

धीरज कु. निर्भय

बौद्ध अध्ययन वभाग, दिल्ली वश्व वद्यालय नई दिल्ली, दिल्ली, भारत

dhiraj.nirbhay84@gmail.com

Available online at: www.isca.in, www.isca.me
Received 20th July 2023, revised 20th September 2023, accepted 15th December 2023

सार

वश्व का इतिहास पुरुषों का इतिहास रहा है, क्यों क इसे महिलाओं की कोई चर्चा कए बगैर हीं लखा गया था ! भारत वर्ष की इसी भू म पर (वर्तमान में लुम्बिनी नेपाल) छठी शताब्दी ईसा पूर्व शाक्य गणराज्य में रानी महामाया के गर्भ से जन्में सद्धार्थ जब कालान्तर में बो ध प्राप्ति कर तथागत बुद्ध कहलाते हैं। मानवता के कल्याणार्थ बुद्ध संघ की स्थापना के 5 वर्ष उपरान्त उनकी वमाता महापजापती गोतमी जिन्होंने इनकी माता की मृत्यु के उपरान्त बाल्य काल से हीं पालन पोषण कया था। यह वचार कर क बुद्ध सांसारिक जीवन से अलग रहकर सबों के बीच समानता और करूणा का सन्देश देकर उनके जीवन को जन्म - मृत्यु के भव बंधन से मुक्त करने का मार्ग बता रहे हैं। अब जब मेरे जीवन का कोई उद्देश्य बचा नहीं है तो क्यों न बुद्ध संघ में दी क्षत होकर अपना और नारी समाज का कल्याण करूं। महामानव बुद्ध भखखुनी संघ की स्थापना को तैयार हो जाते हैं और गोतमी के साथ आई हुई 500 अन्य महिलाओं को भी बुद्धधम्म में दी क्षत करते हैं। यह एक ऐसी घटना थी जिसने पछले कई शताब्दियों से परिवार, ववाह व समाज के पतृ सत्तात्मक बन्धन में उलझी स्त्री समाज को अध्यात्म के क्षेत्र में अपनी मुक्ति प्राप्ति का अवसर दिया। यह संयोग आज से लगभग 2550 वर्ष पूर्व हुआ था। भगवान बुद्ध की प्रमुख महिला शष्या –महापजापती गोतमी,अम्बपाली, उप्पलवणा, पटाचारा, धम्मदिन्ना, सुंदरी नंदा, सोना, सकुला, भद्दा कुंडलकेसा, भद्दा क पलानी, भद्दाकच्चना, कसागोतमी, संघालका माता, खेमाआदि।बौद्धोत्तर काल में भी जब देव प्रय सम्राट अशोक महान् के द्वारा अपनी पुत्री संघ मत्रा को संहल द्वीप भेजा जाता है तो सबसे पहले उसे भखखुनी के रूप में बुद्ध संघ की दीक्षा दी जाती है। सम्पूर्ण मानव इतिहास में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण प्राप्त नहीं होता है जहां एक पता अपनी पुत्री को मानवता की सेवा में इस प्रकार सम र्पत करते हैं।

मुख्य शब्दः अछूत, अर्हत्व, आध्यात्मिकता, इतिहास, उद्गार, गाथा, थेरीगाथा, धम्म, नारी, पतृ सत्तात्मक, बुद्ध, भारत वर्ष, भखखुनी, मातृसत्तात्मक, वद्वत्, सतीप्रथा, समाज, साहित्य, संघ, संसार, संस्कृति।

प्रस्तावना

वश्व इतिहास में मानव व जाति की भाषा, संस्कृति व वचार-पद्धतियां पुरुषों की बनाई हुई हैं। वश्व की रचना व प्रगति में महिलाओं को भागी बनाने के बजाय पुरुषों ने उन्हें व चत्र व बाधक वस्तु के रूप में देखा। महिलाओं के जीवन की धारा जन्म से लेकर मृत्यु तक पता, भाई, पति और अन्ततः पुत्रों के अधीन ही मानी गई है[1]।

सरकारें बनाने व सेनाओं की रचना करने वाले पुरुष ही थे ! अ धकतर धा र्मक परम्पराओं में, जिन्होंने भी लेखन कया उन्होंने महिलाओं की अपेक्षा केवल पुरुषों के अनुभवों व मान सक छ वयों का ही उल्लेख कया है। अर्हत्व की प्राप्ति और आत्मा की मुक्ति के लए पुरुष योनि में जन्म लेना चाहिए, स्त्री जाति में जन्म लेने वाले को ये प्राप्त नहीं हो सकता है[1]।

जीवन चक्र से मुक्ति के लए स्त्री को पुत्र को जन्म देना चाहिए अन्यथा उसकी मुक्ति नहीं हो सकती। और यह भी कौन बताते थे, वेबाबा जो स्वयं कसी स्त्री के कोख से ही जन्मे थे। मृत्यु के उपरान्त पुत्र के हाथों मुखाग्नि न दी गई तो आत्मा को नरक में दुःख भोगना पड़ेगा या आत्मा प्रेत योनि में भटकती रहेगी, उसे मोक्ष प्राप्त नहीं

होगा।सामाजिक दासी प्रथा के साथ हीं मंदिर और मठों में दासी प्रथा को प्रश्रय देने वाले ऐसे हीं लोग थे।

शोध प्र व धः ऐतिहा सक सन्दर्भ में बुद्धधम्म और भख्खुनी संघ का सामाजिक अन्वेषण।

परिचर्चाः भैषज्य गुरु बुद्ध ने बुद्धत्व प्राप्ति (बुद्ध गया) के उपरान्त ऋ षपत्तन मृगदाव (काशी के निकट सारनाथ) में पंचवग्गीय भख्खुओं के साथ आषाढ़ पू र्णमा ति थ (गुरु पू र्णमा) को धर्म-चक्र-पवत्तन कया और बुद्ध संघ की स्थापना की[2]। महाकारु णक तथागत के करुणा-मैत्री के उपदेशों से प्राणी मात्र की व्यथा दूर हुई । ममतामयी नारी-जाति के प्रति भी भगवान की करुणा-पूर्ण भावना थी । वे चाहते थे क स्त्रियों को अ धकार प्राप्त हों, ता क वे सम्मान पूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें । तत्कालीन महिलाओं ने अपनी साधना एवं त्याग-भावना से मंगलमय उपदेशों को ग्रहण कया और प्रमा णत कर दिया क कंज-क लका-सी सुकोमल नारियाँ भी पुरुषों की भांति साधनामय जीवन बिताती हुईं अर्हत्व प्राप्त कर सकती हैं[2]। भक्खु संघ की स्थापना के 5 वर्ष उपरान्त वश्व गुरु बुद्ध अपनी वमाता महापजापती गोतमी के अनुरोध और अपने प्रय शष्य आनन्द के वशेष आग्रह पर भख्खुनी संघ की स्थापना करते हैं। बुद्धधम्म के वनय पटक में सभी वनयों और नियमों का संग्रह आज भी उपलब्ध है जिसमें भख्खुनियों के लए 311 नियम संक लत कए गए हैं[1]। यह एक ऐसी घटना थी जिसने पछले कई शताब्दियों से परिवार, ववाह व समाज के पतृ सत्तात्मक बन्धन में उलझी स्त्री समाज को अध्यात्म के क्षेत्र में अपनी मुक्ति प्राप्ति का अवसर दिया। जिसने ब्राह्मण समाज के कठोर नियमों को जिसे ईश्वर की आज्ञा के रुप में शास्त्रों में आज संग्रहित कया गया है, उसको चकनाचूर कर दिया। यह संयोग आज से लगभग 2550 वर्ष पूर्व हुआ था। बुद्धधम्म के आ वर्भाव के उपरान्त हीं हमें भारत वर्ष में मातृ सत्तात्मक समाज के उत्थान की झलक मलती है।

बौद्ध- भख्खुनी-संघ का प्रारम्भ

बौद्ध युग में परिवार की स्त्रियों को पुरुषों के समान धर्म-पालन का अ धकारथा, अ पतु वे पुरुषों की भाँति गृहावास त्यागकर बुद्ध के द्वारा संस्था पत भख्खुनी-संघ में भी प्रवेश लेती थीं। संघ में पुरुष एवं नारी, क्रमशः भक्खु एवं भख्खुनी के रूप में रहकर दुःखों के वनाश के लए साधना करते थे | बुद्ध के द्वारा भख्खुनी-संघ की स्थापना का नारियों नेहार्दिक स्वागत कया था तथा उसमें प्र वष्ट होने के लए अभूतपूर्व उत्साह दिखाया था।

भक्षु-संघ की स्थापना के पाँच वर्ष बाद भगवान बुद्ध की मौसी महापजापती गोतमी उनके पास उस समय पहुँची जब वे क पल वस्तु के न्यग्रोधाराम में वहार कर रहे थे तथा उनसे स्त्रियों के लए प्रवज्या देने का अनुरोध कया कन्तु बुद्ध ने इस अनुरोध को स्पष्ट शब्दों में अस्वीकार कर दिया । गोतमी इस अस्वीकृति से निराश नहीं हुई। वह कुछ दिनों के बाद पुनः बुद्ध से मलने वैशाली गई । इस बार उन्होंने केशों को कटवा लया था तथा शरीर पर काषाय वस्त्र धारण कर लए थे। इसके अतिरिक्त अन्य शाक्य-स्त्रियों को भी साथ में ले लया था । वह क पल वस्तु से वैशाली पैदल गई थी। गोतमी प्रवज्या पाने के पूर्व हीं प्रव्रजित व्यक्ति जैसी वेशभूषा धारण कर पैदल इस लए गई थी क बुद्ध केवल नारी की शारीरिक दुर्बलता के कारण उसे संघ में प्रवेश देनेके अयोग्य न समझें ।वैशाली में उसकी आनन्द से भेंट हुई। आनन्द ने गोतमी की इच्छा को समझकर स्वयं बुद्ध के पास जाकर स्त्रियों के लए प्रवज्या देने का अनुरोध कया, कन्तु बुद्ध ने पुन: उस वषय में अपनी असहमति प्रकट की । तत्पश्चात आनन्द ने बुद्ध को उनके उस सद्धान्त का, जिसमें स्त्रियों को भी अर्हत पद पाने का अ धकारी बताया गया था, स्मरण कराते हुए कहा क गोतमी आपकी अ भभा वका, पो षका, क्षीरदायिका हैं। जननी के मरने के बाद उन्होंने बहुत उपकार कये हैं, अतः स्त्रियों को प्रवज्या की अनुमति दे[3]।

कुछ नारी-रत्नों ने संसार के वैभव को त्याग काषाय-वस्त्र धारण कर साधना-पथ को अपनाया और कुछ गृह में निवास करती हुईं शील-पालन द्वारा त्रिरत्न की शरण में रह अपना जीवन सफल कर लया। बुद्ध काल से इस समय तक की आदर्श बौद्ध-महिलाओं का जीवन-चरित्र देने का वशेष प्रयत्न यहां कया गया है। यद्य प यह पूर्ण है, ऐसा नहीं कहा जा सकता, फर भी यथा-सम्भव प्रयत्न कया गया है[3]।

अञ्ञतरा थेरी : सुखं सुपाहि थेरिके कत्वा चोलेन पारुता । उपसन्तो हि ते रागो सुक्खडाकं व कुम्भियं ॥1॥ इत्थं सुदं अञ्ञतरा थेरी अपञ्ञाता भक्खुणी गाथं अभा सत्थाति॥[4]

वत्से ! तू सुख की नींद सो ।अपने हाथ से बनाये हुए चीवर को ओढ़कर, तू (इस शरीर में) परम शान्ति प्राप्त कर । क्यों क कड़ाही में पड़े हुए शुष्क शाक की तरह, तेरा राग-समूह (दग्ध होकर) शान्त हो गया है[5]॥1॥

भारतीय-संस्कृति के निर्माण में नारी-समाज ने प्रारम्भ से ही महत्वपूर्ण कार्य कये हैं। नारी के कारण समय-समय पर संस्कृति का रूप भी परिवर्तित हुआ है । उसे कभी पुरुष के समकक्ष माना गया है तो

कभी भोग- वलास कीवस्तु मात्र । अतः भारतीय-संस्कृति के पूर्ण ज्ञान के लए नारी-जीवन का ज्ञान होना आवश्यक है ।

ईसा के लगभग एक हजार वर्ष बाद भारत पर इस्ला मकअतातादयोंका आक्रमण प्रारम्भ हुआ तथा दो-तीन सदियों के उपरान्त यहाँ उनका राज्य भी हो गया। वह राज्य, जो क इतिहास में इस्ला मक-साम्राज्य के नाम से वख्यात हुआ, नारियों के वकास में अत्य धक घातक सद्ध हुआ | कारण, उक्त राज्य में नारी के शील-रक्षण का प्रश्न सबसे महत्त्वपूर्ण हो गया । फलतः नारियों की सामाजिक गति व धयों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया तथा वे परदे के भीतर बन्द-सी कर दी गई । इससे नारियों की शक्षा को गहरा आघात पहुंचा और वे एक प्रकार से अज्ञानता एवं पराधीनता के बन्धनों में जकड़ दी गईं ।

तदुपरान्त भारत पर अंग्रेजों ने अपना राज्य कायम कया। यद्य प अंग्रजों के शासन-काल में शक्षा का प्रसार हुआ कन्तु अंग्रेजी भाषा को दिए गए अत्य धक महत्त्व के कारण इस देश की जनता ने पा ल, प्राकृत, संस्कृत आदि भाषाओं में लखे ग्रन्थों में बिखरी भारतीय-संस्कृति को जानने या उस पर गौरवशील होने का अनुभव ही नहीं कया। हालां क भारतीय समाज में महिलाओं को सम्मान और बराबरी का स्थान दिलाने में अंग्रेजी राज का शुक्रगुजार होना चाहिए क्यों क अंग्रेजी शासन काल में हीं सबसे वीभत्स प्रथा जो मध्यकालीन भारतीय महिला समाज पर जबरदस्ती थोपी गई थीं, सती प्रथा के अन्त की घोषणा हुई थी।

चूं क मैं जिस मनिहारी नगर से हूं 1770 ई. के कालखंड में जब यह पू र्णया जिले के अन्तर्गत आता था, 14 फरवरी 1770 ई. को पू र्णया जिला वर्तमान पू र्णया, कटिहार, अररिया और कशनगंज क्षेत्र को मला कर बनाया गया था । गेरार्ड गुस्टावसडु करैल ने जो पू र्णया जिले के पहले जिला धकारी थे, सोरा नदी कनारे चता मेंसती की जा रही वधवा स्त्री का जीवन बचाने के लए उसे अपनी पत्नी की मान्यता दी, वो पू र्णया जो उस समय कालापानी के नाम से मशहूर था। वो उनका ससुराल भी बन गया था। ऐसी मानवता और सती प्रथा के वरूद्ध खड़े होने वाले और वधवा ववाह के पक्षधर जिन्होंने अपनी कृति से पू र्णया को गौरवान्वित कया था, ऐसे पहले जिला धकारी को हमारा सलाम है[6,7]।

4 दिसंबर, साल 1829 को लॉर्ड व लयम बैंटिक की अगुवाई और राजा राम मोहन राय जैसे भारतीय समाज सुधारकों के प्रयासों से सती प्रथा पर भारत में पूरी तरह से रोक लगी थी। आधुनिक भारत के जनक राजा राम मोहन राय ने सती प्रथा को खत्म करने के लए कई जतन कए. इसी के साथ उन्होंने वधवा ववाह को भी सही ठहराया था ।बाल हत्या लड़ कयों के सन्दर्भ में, बाल ववाह, दासी प्रथा, महिला शक्षा के लए कॉलेज और स्कूल का निर्माण, पर्दा प्रथा, बहुपत्नी प्रथा, ववाह, तलाक और सम्पत्ति के अ धकारों में असमानता आदि पर ब्रिटिश कालखंड में हीं सुधारों की शुरूआत हुई थी।

भारतीय-संस्कृति मुख्य रूप से दो भागों में वभक्त की जाती है- वैदिक संस्कृति एवं श्रमण संस्कृति। वैदिक संस्कृति के मूल साहित्य में वेद, ब्राह्मण, उपनिषद्, धर्मसूत्र आदि प्रमुख हैं। श्रमण संस्कृति के आज तक दो रूप जी वत हैं- जैन संस्कृति एवं बौद्ध संस्कृति । इन दोनों ही संस्कृतियों के मूल साहित्य को आगम-साहित्य के नाम से जाना जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है क जैनागमों का भाव श्वेताम्बर-सम्प्रदाय द्वारा सम्मत 45 आगमों से है।

भगवान् महावीर एवं भगवान बुद्ध ने ईसा की लगभग पाँचवीं-छठी सदी पूर्व अपनेधर्म का प्रसार लौ कक भाषा प्राकृतव पा ल के माध्यम से कया था । उक्त दोनों महापुरुषों कानिर्वाण क्रमशः ईसा के लगभग 526 तथा 483 वर्ष पूर्व में हुआ था।

भगवान बुद्ध की प्रमुख महिला शष्याएं[8]:

बुद्ध ने महिलाओं को नाम प्रदान कए, दोनों भख्खुनी और आम, जो प्राप्ति और चरित्र के उदाहरण थे। ये क्रमशः अंगुत्तर निकाय के पंचम वग्गा और षष्ठ वग्गा में सूची बद्ध हैं;
वरिष्ठता में सबसे आगे: महापजापती गोतमी
महान ज्ञान में सबसे आगे: खेमा
मान सक शक्ति में सबसे आगे: उप्पलवणा
वनय कंठस्थ करने में सबसे आगे: पटाचारा
धम्म बोलने में सबसे आगे: धम्मदिन्ना
अवशोषण में सबसे आगे : सुंदरी नंदा
ऊर्जा में सबसे आगे: सोना
पेशनीगोई में सबसे आगे: सकुला
तीव्र अंतर्दृष्टि में सबसे आगे: भद्दा कुंडलकेसा
पछले जन्मों को याद करने में सबसे आगे: भद्दा क पलानी
महान अंतर्दृष्टि में सबसे आगे: भद्दा कच्चना
मोटे वस्त्र धारण करने में अग्रणी: कसा गोतमी
आस्था में सबसे आगे: संघालका माता

उपा सकाओं (गृह णयों) में अग्रणी:

शरण के लए पहली बार जाने में सबसे आगे: सुजाता सेनिया धता
दाता के रूप में अग्रणी: वशाखा
 वद्या में अग्रणीः खुज्जुत्तरा
सबसे पहले जो मेत्ता में रहती है: सामवती
अवशोषण में सबसे आगे: उत्तरानंद माता
उत्तम वस्तुएँ देने में सबसे आगे: सुप्पवास को लय धता
बीमारों की देखभाल में सबसे आगे: सुप्पिया
अनुभवात्मक वश्वास में अग्रणी: कात्यायनी
 वश्वसनीयता में सबसे आगे: नकुलमाता
मौ खक प्रसारण के आधार पर वश्वास में सबसे आगे: कुराराघरा की काज़ी

संत-साहित्य पर प्रायः यह आरोप कया गया है क नारी-निंदा इसका एक प्रमुख अंश है। गहराई से देखने पर इस दोषारोपण में सत्य का कुछ ही अंश मलेगा। पूर्ण सत्य तो यह है क संतों या ज्ञानियों और भक्षुओं ने निन्दा अथवा कठोर आलोचना सर्वत्र काम-वासना कीही की है और उनमें बहुत बड़ी संख्या पुरुष साधकों की हीं रही है। कन्तु असल में नारी को अत्य धक अपमानित तो हमारे श्रृंगार-रस प्रधान साहित्य में कया गया है। जिस काम-वासना की यतियों और   भक्षुओं ने भर्त्सना की है, उसी को श्रृंगारिक क वयों ने अलंकृत भाषातथा आकर्षक शैली में अ भव्यक्त एवं उत्तेजित कया है । नारी के बाह्य रूप पर ही सदा उनकी कामुक दृष्टि अटकी रही हैं। उसके आंतरिक रूप अथवा शील का स्पर्श उनकी प्रतिभा ने शायद ही कभी   कया। नारी को मात्र प्रदर्शन की वस्तु बनाकर उसका भारी अपमान   कया गया। सब संत-साहित्य में इसकी प्रति क्रया का होना स्वाभा वक था | जरा-मरण-परिणासी रूप-सौन्दर्य की अस लयत को ज्ञान-चक्षुओं से देखा यतियों, भक्षुओं और भक्षु णयों नेभी[5]।

अंतर्चक्षुओं के खुलते ही एक बौद्ध भक्षुणी गा रही है
अम्बपाली थेरीः काननम्हि वन सण्डचारिनी को कला व मधुरं निकूजितं । तं जराय ख लतं तहिं तहिं सच्चवादि वचन मनञ्ञथा ॥ 261॥ पीनव पहितुग्गता उभो सोभते सुथनकापुरे मम । थेरीति ब लम्बन्ते' नोदका सच्चवादिवचनम नञ्ञथा ॥ 265॥[4]

"वनचारिणी को कला की मधुर कूक के समान कसी समयमेरी प्यारी मीठी बोली थी, वही आज जरावस्था में स्ख लत और भराई हुई है; स्थूल, सुगोल उन्नत कभी मेरे दोनों स्तन सुशो भत होते थे, वही आज जरावस्था में पानी से रीती लटकी हुई चमड़े कीथै लयों के सदृश हो गये हैं[5];

सुन्दर, वशुद्ध, स्वर्ण-फलक के समान कभी मेरा शरीर चमकता था, वही आज जरावस्था में सूक्ष्म झुर्रियों से भरा हुआ है। रूप-लावण्य का क्या ही यथार्थ दर्शन इस चक्षुष्मती स्थ वरा ने कया है[5]।
एक दूसरी थेरी का महा पुरुषार्थ दे खए। वह वश्व- वजयी मार को कस तेजस्विता के साथ डांट रही है, "काम-तृष्णा और स्कन्ध-समूह भाले की तरह बिद्ध करते हैं, जिसे तू भोगों का आनन्द कहता है वही मेरे लए दुःख है, घृणा का कारण है। वासना का सब जगह से उच्छेदन कर मैंने अज्ञानान्ध कारको वदीर्ण कर दिया है । पापी मार ! प्रा णयों का अंत करने वाले ! समझ ले, आजतेरा ही अंत कर दिया गया। तू मार डाला गया ।

इन भख्खुनियों ने, इन थेरियों ने, वासना की जड़ को तोड़ डालाथा, हृदय-मूल से दाहक तृष्णा-तन्तुओं को उखाड़ कर फेंक दिया था, उनके समस्त मल नष्ट हो गये थे, क्यों क उन्होंने अशु च, दुर्गन्धमय और व्या धयों के भरे शरीर का ध्यान कया था, उसे एका धक बारअशुभ भावना की दृष्टि से देखा था।और अब वे सब निर्माण-पथ-गा मनी थेरियाँ सम्यक् संबुद्ध का उपदेशा मृत पीकर परितृप्त थीं, प्रसन्न चत्त थीं। उनके जीवन में अब अन्धकार नहीं, प्रकाश था; निराशा नहीं, मंगल आशा की उषा थी; उनके निवंद में ले आनन्द-ही-आनन्द छलकता था। उनके पुण्य प्रमोद केगीत उद्गार थे :

"आज मेरी भव-बेड़ी कट गई ।मेरे हृदय में बिंधा हुआ तीर निकल गया। तृष्णा की लौ सदा के लए बुझ गई । सब चत्त मलों से मैं वमुक्त हूं ।सभी बोझों को उतार कर मैंने फेंक दिया है।मैं सर्वोत्तम मंङ्गलों की अ धकारिणी हूं आज । अब मैंसर्वथा निष्पाप हूँ, परम शांतहूं[5]।"

ऐसी हैं बौद्ध भख्खुनियों की, थेरियों की लोक-कल्याणकारी गाथाएँओर पुण्य कथाएँ।

"पा ल-वांग्मय से थेरी-गाथाओं को अनुवादित कर वद्वतवर पं डत भरत संह उपाध्याय ने हिन्दी-साहित्य की वास्तव में परमसेवा की है। अनुवाद यथार्थ, शैली सरल और भाषा सुन्दर और सजीव है। आशा है, हिन्दी जगत में थेरी-गाथाओं का समु चत आदर होगा ।ऐसे श्रेयस्कर साहित्य की आज अ धक आवश्यकता रही है। पाश्चात्य भोग-प्रधान सभ्यता का आज जिस प्रलय वेग से हमारे देश पर आक्रमण हो रहा है, उसे कुछ हद तक रोकने में, मेरी श्रद्धा है, ऐसा साहित्य अवश्य सहायक हो सकता है। कन्या- वद्यालयों एवं महिला- वद्यालयों के पाठ्य-क्रम में थेरी-गाथाओं को स्थान मलना ही चाहिए ।इसके अ धक-से-अ धक प्रचार का हम सभी आकांक्षी हैं[5]|"- वयोगी हरि,1950

पा ल बौद्ध साहित्य तीन पटकों या पटारियों में रखा हुआ है। वे तीन पटक हैं -सुत्त पटक, वनय पटक, और अ भधम्म पटक । सुत्त पटक पाँच निकायों अथवा शास्त्र समूहों में वभाजित है- दीघनिकाय, मज्झिमनिकाय, संयुक्तनिकाय, अंगुत्तरनिकाय और खुद्दकनिकाय । खुद्दकनिकाय में 14 अन्यहैं। उन्हीं में से एक है थेरीगाथा (भख्खुनियों की गाथाएँ)[5]।

थेरीगाथा - 522 गाथाओं (पा ल श्लोकों) का एक संग्रह है, जिसमें 73 बौद्ध भख्खुनियों के उद्गार सन्निहित हैं,जो 16 भागों में वभक्त हैं। अत्यन्त संगीतात्मक भाषा में,आत्मा भव्यंजनात्मक गीति-काव्य की शैली के आधार पर, अपने जीवनानुभवों को व्यक्त करते हुए यहां बौद्ध भख्खुनियों ने अपने जीवन-काव्य को गाया है। नैतिक सच्चाई, भावनाओं की गहनता और सबसे बढ़कर एक अपराजित वैयक्तिक ध्वनि, इन गीतों की मुख्य वशेषताएँ हैं। निर्वाण की परम शान्ति से भख्खुनियों के उद्गारों का एक-एक शब्द उच्छव सत है। यहाँ संगीत भी है और जीवन का सच्चा दर्शनभी[5]।

भद्दाथेरी- सद्धाय पब्बजित्वान भद्दे भद्ररता भव । भावेहि कुसले धम्मे योगक्खेमं अनुत्तरं ॥ 9 ॥[4]

भाग्यवती भद्रे ! तूने श्रद्धापूर्वक प्रव्रज्या ली। अब तू उसके अनुकूल कल्याणकारी धर्म (भद्र) में लीन हो जा । कुशल धर्म का अनुशीलन करती हुई, तू परम शांति के मार्ग में अग्रसर होगी[5] ॥6॥

आधुनिक गीत की परिभाषा करते हुए महादेवी वर्मा नेकहा है, "सुख-दुःख की भावावेशमयी अवस्था का गने-चुने शब्दों में स्वर-साधना के उपयुक्त चत्रण कर देना ही गीत है"
इस अर्थ में भख्खुनियों की गाथाएँ श्रेष्ठतम गीत कही जा सकती हैं; कंतु आधुनिक गीतों से इनकी अनेक वशेषताएँ भी हैं। सबसे बड़ी और प्रधान बात तो यह है क व आधुनिक गीतकार की चरसं गनी वेदना का यहाँ पता तक नहीं है । बौद्ध भख्खुनियां निराशावादिनी नहीं हैं । निर्वाण की परम शान्ति का वर्णन करते हुए वे थकती नहीं। जीवन की वषमताओं पर अपनी वजय का ही वे गान गाती हैं। अपनी निम्न प्रकृति (मार) से वे डट कर लड़ती हैं और इस पर वजय प्राप्त करती हैं। वजय-प्राप्ति की अवस्था में उनका यह उद्गार फूट पड़ता है, "अहो ! मैं बुद्ध की कन्या हूं। उनके मुख से उत्पन्न, उनके हृदय से उत्पन्न !" नारी-जीवनकी भगवान बुद्ध की अनुकम्पा का कतना बड़ा भाग मला था ! अवसाद और दुश्चिंता की यहाँ कहीं झलक तक नहीं है । "अहो ! मैं कतनी सुखी हूं ! मैं कतने सुख से ध्यान करती हूं ।"

यह उनके उद्गारों की प्रतिनि ध ध्वनि है । बार-बार उनका यहीप्रसन्न उद्गार होता है, "सीतिभूतम्हिनिब्बुता।" अर्थात् निर्वाण को प्राप्त कर मैं परम शान्त हो गई, निर्वाण की परम शान्ति का मैंने साक्षात्कार कर लया । निराशा, दुःख और स्वच्छन्दता की प्रवृत्तियां जो वश्व के अ धकांश गीति-साहित्य की वशेषताएँ हैं, यहाँ बिल्कुल नहीं मलेंगीं। भख्खुनियों के उद्गारों में निराशा-वाद का निराकरण है, पुरुषार्थ की वजय है, साधना लब्ध इन्द्रियातीत सुख का साध्य है और नैतिक ध्येयवाद की प्रतिष्ठा है। आज बुद्ध और बौद्ध संस्कृति के नाम के साथ दुःख और निराशावाद के तत्वों को अक्सर जोड़ दिया जाता है । कुछ एक आधुनिक गीतकारों के वषय में तो यहाँ तक कह दिया गया है, क उनकी वेदनापद्धति पर बौद्ध प्रभाव उपल क्षत है; कन्तु यह एक शुद्ध भ्रम है । बुद्ध या उनके शष्य भक्षु- भक्षु णयों ने कभी दुःख और निराशा के गीत नहीं गाए | भगवान बुद्ध का आ वर्भाव ही दुःख के प्रहाण के लए हुआ। जो कुछ भी दुःख का वर्णन बौद्ध धर्म में है, वह इसी दृष्टि से है क "जो दुख्ख को देखता है, वह उसके समुदय को भी देखता है, उसके निरोध को भी देखता है और निरोध के मार्ग को भी ।" अतः यह दुःख-दर्शन भी अन्त में सुख में पर्यव सत होता है, जिसका साक्षात्कार यहीं जीते-जी निर्वाण के रूप में कया जाता है | इसके वपरीत आधुनिक गीति-काव्य में अतृप्त वासना है, अजब सौन्दर्य की उपासना है, जिससे निराशा पैदा होती है । आज का क व सौन्दर्य-पान को जीवन का लक्ष्य बताता है, फर उसे वष का स्वाद क्यों बतलाना पड़े ? कन्तु बौद्ध भख्खुनियाँ तो अशेष संस्कारों को ही अनित्य, दुख्ख और अनात्म मानती हैं, वासना के क्षय के लए प्रयत्न करती हैं, सौन्दर्य में अशुभ की भावना करतीहैं। फर इन बंधनों से मुक्ति प्राप्त कर लेने पर उनके सुख के दिन क्यों न हों ? यही आधुनिक गीतों और इन भख्खुनियों के गीतात्मक उद्गारों की मुख्य व भन्नताएँ हैं ।

थेरी-गाथाः में 73 भख्खुनियों के उद्गार सन्निहित हैं । ये सभी भख्खुनियाँ भगवान बुद्ध की शष्याएँ थीं। महाराज शुद्धोदन की मृत्यु के उपरान्त भगवान बुद्ध ने अपनी वमाता महापजापती गोतमी को भख्खुनी होने की अनुमति दे दी थी। उसके साथ पांचसौ अन्य महिलाएं भी प्रवर्जित हुई थीं। कालान्तर में भख्खुनियों का एक अलग संघ ही बन गया था और नाना कुलों और नाना जीवन की अवस्थाओं से प्रज्ञा पत होकर स्त्रियों ने शाक्यमुनि केपाद-मूल में बैठ कर साधना का सान्निध्य स्वीकार कया था। इन्हीं में से 73 भख्खुनियाँ अपने

जीवनानुभवों को हमारे लए अनुकंपा-पूर्वक छोड़ गई हैं, जो थेरी-गाथा के रूप में आज हमारे लए उपलब्ध है। यही थेरीगाथा की रचना का सं क्षप्त इतिहास है।

कस उद्देश्य से, कन कारणों से, कस सामाजिक परिस्थिति में प्रत्येक भख्खुनी ने बुद्ध, धम्म और संघ की शरण ली थी, इसका सं क्षप्त ववरण थेरीगाथाकी टीका 'परमत्वदीपनी'(5वीं शताब्दी) के आधार पर प्रत्येक गाथा के आरम्भमें दिया गया है । इससे प्रत्येक भख्खुनी के जीवन-वृत्त के साथ उसकी गाथा का सम्बन्ध मलाते हुए और अवेक्षण करते हुए, जिनमें उनके ये उद्‌गार निकले थे. वद्‌वत् जन सह आम जनइन संप्रवर्तक गाथाओं की आत्मा को समझ सकेंगे, ऐसा वश्वास है[5]।

प्रस्तुत अनुवाद सन्1947 में हिन्दुस्तानी अकादमी की तिमाही पत्रिका "हिन्दुस्तानी" के अप्रैल- सतम्बर अंक में निकला था[5]।

बौद्ध भख्खुओं के वार्तालाप थेरगाथा नामक ग्रन्थ में लखे गये हैं और भख्खुनियों के वार्तालाप का ग्रन्थ है थेरीगाथा। थेरीगाथा के नीचे लखे अवतरण को पढ़कर सहज ही ज्ञात हो जाता है क गोतमी का हृदय बुद्ध के प्रेम से कतना परितृप्त था।

महापजापती गोतमी : बुद्धवीर नमोत्यत्थु सब्बसत्तानं उत्तम | यो मं दुक्खा पमोचे स अञ्ञञ्चबहुकंजनं॥ 157 ॥ सब्बदुक्खंपरिञ्ञातं हेतुतण्हा वसो सता । अरिय ड् गकोमग्गो निरोधो फु सतो मया ॥ 158 ॥ माता पुत्तो पता भाता अय्यिका च पुरे अहुं। यथाभुच्चं अजानन्ती संसरिहं अनिब्बिसं ॥ 159॥दिट्ठो हि मे सो भगवा अन्तिमोयंसमुस्सयो । निक्खीणो जातिसंसारो नत्थि दानि पुनब्भवो ॥ 160 ॥! आरद्व वरिये पहितत्ते निच्चंदलहपरक्कमे । समग्गे सावके पस्स एसा बुद्धान वन्दना ॥ 161॥। बहूनं वत अत्थाय माया जनयि गोतमं । ब्या धमरणतुन्नानं दुक्खक्खन्धं ब्यपानुदि ॥ 162 ॥[4]

"हे सुगत | तुम जब छोटे थे, तब तुम्हें देखकर और तुम्हारी तोतली बोली सुनकर आँख-कान को जितनी तृप्ति हुई थी, उससे कहीं अ धक तृप्ति तुम्हारे दिये धम्म-रसका पान करने से हुई है।

हे गौतम! मेरी बहिन माया ने लोक-हितके लये ही तुम्हें पैदा कया था । वृद्धावस्था, दुःख-व्या ध, मृत्यु और शोक केरुदन को तुमने हरण कर लया है । ये दोनों माता और पुत्र—गोतमी और गोतम साक्षात् भक्ति ओर ज्ञान के स्वरूप हैं, इनकी लोक-लीला अलौ कक है ।

गोतमी का चलाया हुआ भख्खुनी-संघ लगभग हजार वर्ष तक देश- वदेशमें धम्म-प्रचार करके त्रि वध ताप-त्रस्त नर-नारियोंके हृदय को शान्ति प्रदान करता रहा। गोतमी ने भख्खुनी-संघ को लेकर ज्ञान और सदाचार का जो मन्त्र घर-घर में फूँका था; निश्चय ही उसका प्रभाव आज भी नारी-समाज केजीवन मेंअंत र्वष्ट है । भख्खुनी-संघ नारीजागरण का एक उज्ज्वल उदाहरण है और उसका नेतृत्व करने के कारण गोतमी का जीवन वश्व-नारी के लये पठन,मनन और अनुकरण करने की वस्तु है।

बौद्धोत्तर काल में भी जब हम सम्राट अशोक महान् के द्वारा अपनी पुत्री संघ मत्रा को संहल द्वीप भेजा जाता है तो सबसे पहले उसे भख्खुनी के रूप में बुद्ध संघ की दीक्षा दी जाती है। जो संहल द्वीप में सदा के लए अमर हो जाती हैं। सम्पूर्ण वश्व इतिहास में ऐसा कोई दूसरा उदाहरण प्राप्त नहीं होता है जहां एक पता अपनी पुत्री को मानवता की सेवा में इस प्रकार सम र्पत करते हैं।

संहल द्वीप में भख्खुनी संघ : पाट लपुत्र में आयोजित तृतीय बौद्ध संगीति के उपरान्त थेर महेन्द्र को बत्तीस वर्ष की आयु में धम्म प्रचार के लये संहलद्वीप में भेजा गया। उस देश के राजा तिस्य आध्यात्मिक ज्योति से दीप्तमहेन्द्र के सुन्दर स्वरूपको देखकर वस्मित हो उठे। उन्होंने बहुत ही श्रद्धा और सत्कार पूर्वक महेन्द्र को अपने यहाँ रक्खा । संहल में सहस्त्रों स्री-पुरुष महेन्द्र के उपदेश को सुनकर बौद्ध धर्म ग्रहण करने लगें। थोड़े दिनों के बाद संहल की राजकुमारी अनुलाने पाँच सौ स खयों के साथ भख्खुनी-व्रत लेने का संकल्प कया, उस समय महेन्द्र के मन में आया क इन सब स्त्रियों को अच्छी तरह धम्म की शक्षा देने तथा स्त्रियों मेंधम्म प्रचार करने के लये एक श क्षता और धर्मशीला भख्खुनी की अत्यन्त आवश्यकता है । इस लये उसने अपनी बहिन संघ मत्राको संहल भेजने के लये अपने पता सम्राट अशोक के पास संदेश भजवाया। राजकुमारी संघ मत्रा को तो धम्म के सवा कसी दूसरी पा र्थव वस्तु की चाहना थी नहीं । उसने जब सुना क धम्म प्रचार के लये उसे अपने भाई महेन्द्र के पास संहलद्वीप में जाना हैतो उसके हृदयमें आनन्द न समाया। पुण्यशीला संघ मत्रा ने धम्म प्रचार के लये संहल-द्वीप कोप्रस्थान कया[9]। भारत के इतिहास में यह पहला ही अवसर था; जब एक महामहिमशाली सम्राट की कन्या ने सुन्दर शक्षा-दीक्षा तथा धर्मानुष्ठान के द्वारा जीवन कीपूर्णता कोप्राप्त कर दूर देश की नारियों को अज्ञानान्धकार से मुक्त करने के लये देश से प्रयाण कया । उस समय भारत में संघ मत्रा के इस धम्म-प्रयाण के समाचार से लोगों के हृदय में उसके प्रति कैसी उदात्त भावना का उदय

हुआ होगा, इसकी आज कल्पना भी नहीं की जा सकती है। संघ मत्रा जब संहल में पहुँची तो उसकी तेजस्विनी मुख-मुद्रा, तपस्विनी का वेष तथा अपूर्व धम्म भावना देखकर वहाँ के स्री-पुरुष चत्र ल खत से हो गये | संघ मत्राने वहाँ एक भख्खुनी-संघ स्था पत कया और अपने भाई महेन्द्र के साथ उसने संहलद्वीप के घर-घरमें बुद्धधम्म की वह अमर ज्योति जगायी, जिसके प्रकाश में आज ढाई हजार वर्ष बीतने पर भी संहलनिवासी नर-नारी अपनी जीवन-यात्रा व्यतीत करते हैं, और भगवान तथागत, उनके उपदिष्ट धम्म और संघ की शरण में जयघोष करते हैं। महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थ में संघ मत्रा का उल्लेख मलता है। महावंशका लेखक लखता है क 'संघ मत्राने पूर्ण ज्ञान प्राप्त कया था। संहल में रहते समय धम्मकी उन्नति के लये उसने बहुतेरे पुण्य कार्य कये थे। संहल के राजाने बड़े ही आदर-सत्कार तथा ठाठ-बाट से उसकी अन्त्येष्टि- क्रया की थी[10]।

जो भी हो, इस प वत्र भारतदेश में एक-से-एक बढ़कर आदर्श जीवन यापन करने वाली नारियाँ हुई हैं; परंतु संघ मत्रा का काम सम्राट अशोक कीकन्या के अनुरूप ही था। सम्राट को इतिहास का रोंने 'महान्' पदवी से वभू षत कया। परंतु देवी संघ मत्रा की महत्ता उससे कहीं बड़ी थी, संहलका इतिहास इसका साक्षी है। अपने महाराजा धराज अशोक महान्की कन्या देवी संघ मत्रा के प वत्र और उन्नत जीवन का स्मरण करके आज भी हमारा सर श्रद्धा से झुक जाता है[10]।

एक तरफ प्रो. धर्मानन्द कौशाम्बी भारत में चौथी शताब्दी में भख्खुनी संघ के ह्वास का जिक्र करते हैं, वहीं 7वीं शताब्दी में चीनी बौद्ध तीर्थयात्री ह्वेन-त्सांग जब भारत भ्रमण को आते हैं तब भी उन्हें कई स्थानों पर भख्खुनी संघ और वहारों के दर्शन होते हैं, जिनका जिक्र वो अपने यात्रा-वृतान्त में करते हैं।

साज्ज अब्बूल्ह सल्लाहं निच्छाता परिनिब्बुता। बुद्ध धम्मं च संघं च उपे म सरणं मुनिं॥–थेरीगाथा[4]

बौद्धागमों से ज्ञात होता है क उस समय नारी-समाज का प्रत्येक वर्ग भख्खुनी जीवन से आकृष्ट एवं प्रभा वत था। सामाजिक एवं पारिवारिक-जीवन से उदास या भयभीत प्रत्येक नारी भख्खुनी-संघ की शरण लेती थी।

वैदिक-साहित्य में भख्खुनी-संघ या उससे मलती-जुलती कसी संस्था का उल्लेख नहीं मलता है। इस कालखंड में महिलाओं का धा र्मक-जीवन सर्फ गृहस्थाश्रम तक ही सी मत था। वानप्रस्थ एवं सन्यासाश्रम में प्रवेश करने का अ धकार केवल पुरुष-वर्ग को ही था। उत्तर-वैदिक-कालमें नारी धा र्मक-अ धकारों से वं चत कर दी गई। उसे उपनीत एवं श क्षत करना भी अनावश्यक समझा जाने लगा। फलतः अनुपनीत एवं अ श क्षत नारी शुद्र की श्रेणी में आ जाने से भोग्यवस्तु के रूप में समाज में रहने लगी थी। उसे वेदों के मन्त्रोच्चारण तक का भी अ धकार नहींरह गया था।

निष्कर्ष

डॉ. वमल कीर्ति ने थेरीगाथा के बारे में लखा है क – यह ग्रंथ सम्पूर्ण पा ल साहित्य में हीं नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में एक अनोखा और अनमोल ग्रन्थ है। सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में थेरीगाथा के मुकाबले का कोई ग्रन्थ नहीं है।

डॉ. धर्म कीर्ति ने और भी सही लखा है – बौद्ध धर्म में थेरीगाथा वश्व का अमर ग्रन्थ है।इस ग्रन्थ से पता चलता है क वैदिक धर्म में नारी जाति को निम्न स्थान एवम् बच्चे पैदा करने की मशीन के अतिरिक्त कुछ भी नहीं समझा जाता था।गीता में स्त्री वर्ग को पापयोनि कहा गया.....। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कया जा सकता जब डॉ. वमल कीर्ति लखते हैं – थेरीगाथा नारी स्वतन्त्रता को प्रकट करने वाला प्रथम ग्रन्थ है। चूं क सन्दर्भ भारत के बौद्धों, जैनियों और वैदिकों का चल रहा है, इस लए डॉ. भक्षु सत्य पालका यह कहना एकदम सही है क तथागत ने इस मामले में क्रान्तिकारी वचार दे कर वैदिक तथा जैन परम्पराओं में आमूल-चूल परिवर्तन करके भख्खुनियों द्वारा अर्हत्-पद प्राप्त करने की संभावनाओं के द्वार खोल दिए[11]।

भगवान बुद्ध ने केवल स्त्री और पुरुष के अन्तर को हीं नहीं बल्कि महारानी और मेहतररानी (सफाई कर्मी) केअन्तर को भी मटाने का सफल का प्रयास कया था। भख्खुनी संघ में कसी प्रकार का भेदभाव की भावना उत्पन्न न हो, इस लए तथागत बुद्ध नेमहापजापती गोतमी एवम् यशोधरा जैसी महारानियों और प्रकृति जैसी मेहतररानियों (चाण्डाल कन्या) को संघ में प्रव्रज्या देने के उपरान्त एक पंक्ति में बिठादिया[11]।

थेरगाथा - स्थ वर नन्दकः श्रावस्ती के एक सम्पन्न कुल में उत्पन्न। भगवान से उपदेश सुनकर परम् पद को प्राप्त। उनसे उपदेश सुनकर 500 भख्खुनियाँ अर्हत् पद को प्राप्त हुईं। भख्खुनियों को उपदेश देनेवालों में सर्वश्रेष्ठ। नन्दक एक दिन भक्षा के लए श्रावस्ती में

निकले तो पूर्व स्त्री उन्हें लुभाने के वचार से हंस पड़ी। उस अवसर पर नन्दक स्थ वर ने यह उदान कहा:

"धीरत्थु पूरे दुग्गन्धे मारपक्खे अवस्सुते ।
नव सोतानि ते काये, यानि सन्दन्ति सब्बदा।। 279
"मा पुराणं अमञ्ञित्थो, मासादे स तथागते ।
सग्गे प ते न रज्जन्ति, कमड़ंग पन मानुसे।। 280
"ये च को बाला दुम्मेधा, दुम्मन्ती मोहपारुता।
तादिसा तत्थ रज्जन्ति, मार खत्तम्हि बन्धने।। 281
"येसां रागो च दोसो च, अ वज्जा च वराजिता।
तादी तत्थ न रज्जन्ति, छिन्नसुत्ता अबन्धना" था।। 282

दुर्गन्धपूर्ण, मार के पक्ष में रहने वाली, वासनापूर्ण (तुम्हें) धक्कार है। तुम्हारे शरीर में नवस्त्रोत हैं जिनसे सदा गन्दगी बहती है।। मुझे पहले जैसा न समझो, तथागत के शष्य को प्रलोभन न दो। तथागत के शष्य स्वर्ग में भी आसक्त नहीं होते, मनुष्य के वषय में तो कहना ही क्या है।। जो मूर्ख हैं, बु द्धमान नहीं हैं, मोह से आच्छादित हैं, वे ही मार के फेंके हुए जाल में आसक्त हो जाते हैं।। जिनकी राग, द्वेष और अ वद्या छूट गई है, जो स्थिर हैं, जिनके सांसारिक बंधन के सूत्र टूट गए हैं, जो मोहजाल से परे हैं वे वहां आसक्त नहीं होते[12]।

आभार

वश्वगुरु भगवान बुद्ध और थेरीगाथा की सभी अर्हत्वभ गनियों सहज्येष्ठ रचनाकारों और बौद्ध वद्वत् जगत के सभी इतिहासकारों को, जिनकी रचनाओं से प्रेरणा प्राप्त कर मैंने अपना यह अत्यन्त मूल्यवान शोधपत्र लेखन पूर्ण कया। पूज्य बाबूजी लोक तन्त्र रक्षक सम्मान से सम्मानित स्वर्गीय सतीश चन्द्र साह स्नेह प्रतिमूर्ति को यह शोधपत्र मैं सम र्पत करता हूं। मुझे पूर्णत: वश्वास है क यह पत्र सर्वस्त्री समाज के लए हितकारी और मार्गदर्शक होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1. सराओ करमतेज संह (2004). प्राचीन भारतीय बौद्ध धर्म. हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली वश्व वद्यालय, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 60, 87 से 109, 130 से 134.
2. भदन्त शांति भक्षु (1948). महायान. वश्वभारती ग्रन्थालय कलकत्ता, पृष्ठ संख्या 59 और 60.
3. माल वका कुमारी वद्यावती (1950). आदर्श बौद्ध महिलाऐं. भारतीय महाबो ध सभा सारनाथ वाराणसी, पृष्ठ संख्या 1, 5, 6, 12, 35, 85 और 92.
4. भागवत एन. के. (1956). थेरी गाथा. बॉम्बे वश्व वद्यालय प्रकाशन बांबे I
5. उपाध्याय भरत संह (1950). थेरी गाथाएं. सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली I
6. झासुशान्त (2017). पू र्णया के अंग्रेज कलेक्टर की ‘वैलेंटाइन’ कहानी. www.ichowk.in/lite/society/purnia-collector-mr-ducarrel-and-his-love-story/story/1/5760.html, 15/02/2017
7. स्टेवर्टचार्ल्स (1814). मर्जा अबूतालेब खान की ए शया. अफ्रीका और यूरोप यात्रा, भाग 01, अनुवाद सम्पादन द् वतीय संस्करण, लोंगमैन प्रकाशन लंदन, पृष्ठ सं. 268.
8. सस्ता साहित्य मंडल (1992). भारत के स्त्री रत्न. भाग 3 दिल्ली, पृष्ठ संख्या 5, 6, 7, 9, 43, 49 और 71.
9. बापट पुरुषोत्तम वश्वनाथ (2010). बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष. प्रकाशन वभाग नई दिल्ली, भारत सरकार, पृष्ठ संख्या 4, 5, 7, 8, 13, 99, 101 और 105.
10. द् ववेदी पण्डित गौरीशंकर (1948). कल्याण. नारी अंक वशेषांक 22 वाँ वर्ष, गीता प्रेस गोरखपुर, 714-733.
11. धर्मवीर (2005). थेरीगाथा की स्त्रियां और डॉ. अंबेडकर. वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 13 से 21.
12. भक्षु धर्मरत्न (2013). थेरगाथा. गौतम बुक सेन्टर दिल्ली, पृष्ठ संख्या 85.
13. आंबेडकर बो धसत्व बाबासाहेब भीमराव (2016). भगवान बुद्ध और उनका धम्म. सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 181, 201 से 204, 390, 391, 396, 400, 429, 430, 433, 435 और 468.
14. उपाध्याय आचार्य बलदेव (2017). बौद्ध दर्शन मीमांसा. चौखम्बा वद्या भवन प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ संख्या 5,7,18,19 और 344.
15. मारग्रेट मैक्निकोल (1923). पोएम्स बाई इन्डियन वूमेन. एसो सएशन प्रेस वाईएमसीए कोलकाता
16. लाहा वमल चरण (2007). वूमेन इन बु द्धस्ट लटरेचर. ए शयन एजुकेशनल स र्वसेज, पृष्ठ संख्या 1 और 26.
17. सांकृत्यायन महापं डत राहुल (2022). वनय पटक. सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 9, 99 से 132 और 624 से 647.